गैर-सहायता प्राप्त निजी स्कूलों में शिक्षा का अधिकार एवं समावेशन

बैंगलुरु और दिल्ली में किया गया खोजपरक अध्ययन*

अर्चना मेंहेडले**

राहुल मुखोपाध्याय***

एनी नामला****

सरकार ने निजी स्कूलों में सुविधाहीन व कमज़ोर वर्ग के बच्चों के लिए शिक्षा का अधिकार मुहैया करवाने का प्रावधान किया है। निजी स्कूलों में 25 प्रतिशत सीटों के आरक्षण का प्रावधान सकारात्मक कदम है। हालाँकि ज़मीनी पड़ताल कुछ और ही कहानी बयां करती है। यह अध्ययन इस प्रावधान के क्रियान्वयन की ज़मीनी हकीकत की पड़ताल करता है।

बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार कानून, 2009 (आर टी ई) का अनुच्छेद 12(1) (स) निजी गैर सहायता प्राप्त स्कूलों में सुविधाहीन व कमज़ोर वर्ग के बच्चों के समावेश का प्रावधान करता है और उन स्कूलों से ऐसे बच्चों के लिए कक्षा 1 और पूर्व प्राथमिक स्तर पर अपनी कुल सीटों का 25 प्रतिशत आरक्षित करने के लिए कहता है। ऐसे स्कूलों में प्रवेश पाने वाले बच्चे आर टी ई के तहत नि:शुल्क शिक्षा पाने के हकदार होंगे। इन स्कूलों को सरकारी स्कूलों में प्रति बच्चा प्रति वर्ष खर्च के बराबर राशि देय होगी। ऐसे दाखिलों के तरीके और समावेशन की प्रकृति का निर्धारण राज्य सरकारों द्वारा बनाए गए नियमों के अनुसार तय होगा।

यह प्रावधान[1] समावेशीकरण को प्रोत्साहन देने के लिए महत्वपूर्ण कानूनी और सामाजिक प्रयास है और यह शिक्षा प्रणाली में व्याप्त विस्तृत असमानताओं को भी संबोधित करने की कोशिश करता है। यह एक अनूठा प्रयास है, क्यों कि यह

**शिक्षा विमर्श*, मार्च-अप्रैल 2015, पृ. 24-37 से साभार।

**विजिटिंग फैकल्टी, टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज, मुंबई।

****असिसटेंट प्रोफ़ेसर,* अजीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी, बेंगलुरु।

****सेंटर फॉर सोशल इक्विटी एंड इन्क्लूजन, नई दिल्ली।

सरकार के द्वारा तय किए गए तरीकों से बच्चों के शिक्षा के अधिकार को पूरा करने के लिए निजी स्कूलों का कानूनी दायित्व बनाता है। कई स्तरों पर इसके सीधे निहितार्थ हैं। प्रशासनिक स्तर पर, यह निहितार्थ ऐसे जुड़ते हैं कि नियमों के संवैधानिक प्रावधान को कितना लागू किया है और अनिवार्य नियामक ढाँचे इसके क्रियान्वयन को कितना संभव बनाते हैं। स्कूली स्तर पर यह मुद्दे दाखिले, फ़ीस, पुनर्भरण और वित्तीय समायोजनों, स्कूलों और शिक्षक की तैयारी, स्कूल और कक्षाओं में सामाजिक-सांस्कृरतिक गतिशीलता, सहकर्मियों के पारस्पकरिक विचार-विमर्श और अकादमिक योजनाओं से संबंधित होते हैं। परिवार के स्तर पर, यह निहितार्थ सामाजिक-सांस्कृतिक भिन्नताओं से जूझने और उनसे सामंजस्य, बैठाने, आर्थिक बाधाओं और शैक्षणिक सहायता प्रदान करने की क्षमताओं के आस-पास घूमते हैं।

यह लेख खोजपरक अध्ययन पर आधारित है। इस शोध को हाथ में लेने का संदर्भ शोधकर्त्ताओं द्वारा सामान्य रूप से आर टी ई कानून[2] पर और खास तौर पर 25% के प्रावधान पर आश्चर्यजनक रूप से कम ध्यानन देना है। अभी तक, क्रियान्वयन की स्थिति या उभरते मुद्दों पर कोई आधिकारिक समग्र रपट नहीं है और केवल एक अकादमिक शोध उपलब्ध है जो सरीन और गुप्ता (2013) का खोजपरक अध्ययन है, जिसमें दिल्ली के बहुत थोड़े लोगों के जवाब के आधार पर 'आर टी ई कोटा' को लेकर प्रधानाचार्यों, माता-पिता, बच्चों की धारणाओं का अध्ययन किया गया है।

प्रावधान का इतिहास और हाल के विवाद

निजी स्कूलों में हाशिए पर मौज़ूद बच्चों के समावेशन का लंबा इतिहास है और इसकी कड़ी शिक्षा की राष्ट्रीय नीति (1968) से जुड़ती है, जिसने सामाजिक वर्गों के आधार पर विभाजन रोकने के लिए 'पब्लिक स्कूल'[3] जैसे विशेष स्कूलों से एक निर्धारित अनुपात में छात्रों को नि:शुल्क शिक्षा देने की अनुशंसा की थी। हालाँकि ऐसे नीतिगत प्रयोजन केवल कागज़ों पर बने रहते हैं और स्कूलों तक बच्चों की पहुँच सामाजिक-आर्थिक स्थिति के अनुसार ही जारी रहती है। सामाजिक जनादेश को पुन: स्थापित करने वाले ऐतिहासिक निर्णय के आने तक निजी स्कूल विशेष वर्ग के लिए बने रहे। सोशल ज्यूरिस्ट बनाम राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली शासन और अन्य क्षेत्र (CW No 3156 of 2002) के मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय ने दिल्ली सरकार को यह सुनिश्चित करने का आदेश दिया कि सरकार द्वारा दी गई भूमि संबंधी रियायत के बदले निजी स्कूल आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्गों के बच्चों को 25% आरक्षण दें। आर टी ई कानून की धारा 12(1) (स) की व्याख्या स्पष्ट करती है कि यही लक्ष्य, चाहे स्कूल सरकार से ऐसी कोई छूट प्राप्त) करते हों या नहीं, सभी निजी गैर-सहायता प्राप्त, गैर-अल्प) संख्यक स्कूलों में भी तय किए जाएँ।

निजी गैर-सहायता प्राप्त स्कूल जिन्होंने अब तक प्रवेश देने के अप्रतिबंधित अधिकार का फ़ायदा उठाया था, उन विद्यालयों ने अप्रैल 2010 में आर टी ई कानून के प्रभावी हो जाने के बाद आर.टी.ई. कानून की संवैधानिकता और धारा

12(1)(स) की वैधता को चुनौती दी। याचिकाओं का निपटारा करते हुए सोसायटी फॉर अनएडेड प्राइवेट स्कूल्स ऑफ़ राजस्थान बनाम भारत सरकार[4] के मामले सुप्रीम कोर्ट की तीन सदस्यीय पीठ के बहुमत का नज़रिया था कि आर टी आई कानून संवैधानिक रूप से वैध है और इसे सभी सरकारी स्कूलों, सहायता प्राप्त स्कूलों (अल्पसंख्यक सहायता प्राप्ता सहित), विशिष्ट श्रेणी के स्कूलों और गैर-सहायता प्राप्त गैर-अल्पसंख्यक स्कूलों में लागू होना चाहिए। यह गैर-सहायता प्राप्त अल्पसंख्यक स्कूलों पर लागू नहीं होगा क्योंकि इस कानून को, और विशेष रूप से धारा 12(1)(स) और 18(3)[5] को, संविधान के अनुच्छेद 30(1)[6] के अंतर्गत गैर-सहायता प्राप्त अल्पसंख्यक स्कूलों को दी गई मौलिक स्वतंत्रता का उल्लंघन करते पाया गया।

कोर्ट के फैसले ने खास तौर पर यह स्पष्ट किया था कि 25% आरक्षण का प्रावधान अकादमिक वर्ष 2012-13 के लिए दिए गए प्रवेशों में लागू होगा। फिर संविधान के अनुच्छेद 15(5) और 21अ की वैधता को जाँचने के लिए यह मामला सुप्रीम कोर्ट की संविधान पीठ को भेजा गया। अनुच्छेद 15(5), जो कि 2006 में 93वें संविधान संशोधन के माध्यम से बनाया गया था, राज्य को नागरिकों के सामाजिक या शैक्षणिक रूप से पिछड़े समूहों या अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की उन्नति के लिए, कानून द्वारा, विशेष प्रावधान बनाने के लिए सक्षम बनाता है, जहाँ तक ऐसे विशेष प्रावधान निजी सहायता प्राप्त और गैर-सहायता प्राप्त शैक्षिणक संस्थानों में उनके प्रवेश से संबंधित हैं। यह संविधान के अनुच्छेद 30(1) में उल्लिखित शैक्षणिक संस्थानों पर लागू नहीं होता। 2002 में 86वें संविधान संशोधन कानून द्वारा शामिल किया गया अनुच्छेद 21अ कहता है कि राज्य द्वारा निर्धारित कानून के अनुसार राज्य को 6 से 14 वर्ष आयु के बीच के सभी बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा देनी होगी। सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि सहायता प्राप्त व गैर-सहायता प्राप्त अल्पसंख्यक स्कूलों पर आर टी ई कानून को लागू करना अल्पसंख्यकों को संविधान के अनुच्छेद 30(1) के अंतर्गत मिले अधिकारों को निष्प्रभावी कर देगा। इसलिए आर टी ई कानून अल्प संख्यक स्कूलों पर लागू नहीं होगा।[7]

यह अध्ययन अप्रैल 2012 में सुप्रीम कोर्ट के आदेश के आने के बाद किया गया था, मगर अधिकांश निजी स्कूल प्रक्रिया समाप्त होने का दावा करके प्रवेश प्रक्रिया को फिर से खोलने के लिए तैयार नहीं थे। इसलिए हमारे अध्ययन का केंद्र बिंदु केवल वे स्कूल ही बने जो अकादमिक वर्ष 2012-13 में प्रावधानों को लागू करना प्रारंभ कर चुके थे। अध्ययन के विवरण में जाने से पहले हम हाल के दशकों में स्कूली शिक्षा के बदलते परिदृश्य पर ध्यान केंद्रित करेंगे, जो एक महत्वपूर्ण घटना है और जिस पर निजी स्कूलों में 25% के प्रावधान के निहितार्थ पर विचार करते समय ध्यान देना ज़रूरी है।

निजी स्कूली शिक्षा का विस्तार और आर.टी.ई. की भूमिका

शिक्षा में निजी क्षेत्र की भूमिका पिछले दो दशकों में लगातार एवं व्यवस्थित रूप में बढ़ी है। एन्युअल

स्टेट ऑफ़ एजुकेशन रिपोर्ट (ASER) बताती है कि भारत में 2012 में प्राथमिक स्कूल जाने वाले 35% विद्यार्थी निजी स्कूलों में नामांकित थे और 2014 तक ये आंकड़ा 41% तक होगा। 2019 तक सरकारी स्कूल प्रणाली प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने के मामले में दूसरे दर्जे पर आ जाएगी (ASER2012), हालाँकि सारे राज्यों में प्राथमिक स्तर पर निजी स्कूलों में नामांकन को लेकर भिन्नता है, लेकिन कई रोचक नमूने भी हैं (तालिका-1)।

निजी स्कूलों में नामांकन के मामले अधिकांश पूर्वी भारत, देश के अन्य राज्यों की तुलना में पीछे हैं। निजी स्कूलों में नामांकन के क्षेत्र में दक्षिण भारत के राज्यों का वर्चस्व है, जबकि मध्यस्थ और केंद्रीय भारत के राज्यों में निजी स्कूलों में मध्यम या कम नामांकन हुए। उत्तर-पूर्व कुछ विरोधाभास प्रदर्शित करता है जहाँ, नागालैंड, मेघालय और मिज़ोरम में अधिक और मध्यम, लेकिन त्रिपुरा में काफ़ी कम नामांकन हुए हैं।

ये आंकड़े विशालकाय निजी अनियमित क्षेत्र को दर्शाते हैं, जिसकी मौज़ूदगी पहले से काफ़ी है। 'बजट स्कूलों' या अनियमित निजी स्कूलों ने हाल के दशक में सार्वजनिक से निजी के व्यापक रूपांतरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। (नाम्बिसान 2012)। जिला शिक्षा सूचना तंत्र (DISE) 2011-12 बताता है कि 28.4 लाख बच्चों के नामांकन वाले पूरे भारत में लगभग 26000 स्कूल हैं, जो मान्यता प्राप्त नहीं हैं।[8]

इस अध्ययन में शामिल दो शहरों में से एक बेंगलूरु वाले कर्नाटक में भी निजी स्कूलों में नामांकन में बढ़ोतरी हुई है। 2006-07 से 2012-13 के रुझानों का आकलन करने वाली शिक्षा विभाग की एक रिपोर्ट के अनुसार सरकारी प्राथमिक स्कूलों में लगभग 12.5 लाख विद्यार्थियों की भारी कमी देखी गई, वहीं संयोग से निजी स्कूल के नामांकन में बढ़ोतरी देखी गई। दरअसल, छह वर्षों में सरकारी स्कूलों से 2.19% की औसत दर से कुल मिलाकर 13.14% से अधिक का विस्थापन हुआ (कर्नाटक

तालिका 1 – निजी स्कूलों में नामांकन प्रतिशत (कक्षा I-V) 2010 (DISE 2010-11) पर आधारित

*प्रतिशत	राज्य	राज्यों की संख्या
60% या अधिक	गोवा, केरल, पुंडुचेरी	3
60% या 59%	मणिपुर, नागालैंड, तमिलनाडु	3
40% या 49%	आंध्रप्रदेश, जम्मू और कश्मीर, कर्नाटक, महाराष्ट्र, मेघालय, पंजाब, उत्तराखंड	7
30% या 39%	दिल्ली, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मिज़ोरम, राजस्थान, उत्तर प्रदेश	6
20% या 29%	असम, चंडीगढ़, गुजरात, मध्यप्रदेश	4
10% या 19%	अरुणाचल प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, ओडिशा, सिक्किम	5
10% या कम	बिहार, त्रिपुरा, पश्चिम बंगाल	3

*आंकड़ों को पूर्णांक में बदला गया है। ASER (2012:5) से।

सरकार 2013:52)। शहरी क्षेत्रों में निजी गैर-सहायता प्राप्ति स्कूलों की उपस्थिति सबसे अधिक(48.9%), उसके बाद सरकारी स्कूल (36.7%) और सहायता प्राप्त स्कूल (12.3%) हैं। हालाँकि, ग्रामीण क्षेत्रों में सरकारी स्कूलों का वर्चस्व) (85%) है उसके बाद निजी गैर-सहायता प्राप्त (11.2%) और सहायता प्राप्त (2.5%)हैं। निजी गैर-सहायता प्राप्त स्कूल प्राथमिक स्तर और उच्च प्राथमिक स्तर दोनों में बढ़े हैं (प्रतिशत क्रमशः लगभग 7.5% और 51% बढ़ा)।[9]

अध्ययन के दूसरे स्थान दिल्ली में भी आस-पास के राज्यों की तरह निजी स्कूलों, विशेष रूप से प्रारंभिक शिक्षा देने वाले स्कूलों का विस्तार हुआ है। 2007-08 में सरकारी और निजी स्कूलों के बीच आनुपातिक वितरण 63:37 था, जो 2011-12 में 55:45 हो गया। नामांकन द्वारा आनुपातिक वितरण के अर्थ में दिल्ली प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्तर दोनों में कर्नाटक से थोड़ी बेहतर है, लेकिन रुझान स्पष्ट तौर पर कर्नाटक की तरह ही हैं। 2007-08 से 2011-12 तक प्राथमिक स्तर पर सरकारी स्कूलों में नामांकन में लगभग 8% की कमी हुई। तालिका-2 और 3 कर्नाटक और दिल्ली दोनों में आरंभिक शिक्षा में निजी क्षेत्र की बढ़ती हुई उपस्थिति को दर्शा रहे हैं।

इसलिए यह स्पष्ट है कि कर्नाटक और दिल्ली दोनों में निजी स्कूलों का प्रतिशत पिछले पाँच वर्षों में बढ़ा है। ये निजी स्कूल, अल्पसंख्यकों द्वारा स्थापित को छोड़कर, आर टी ई की धारा 12(1) (स) के दायरे में आते हैं और उनके लिए अपनी सीटों का 25% तक हाशिए पर मौज़ूद वर्ग के बच्चों को देना अनिवार्य है। आर टी ई ने "राज्य–निजी" समीकरण में नया अध्याय खोल दिया है और इसे पूरे देश में निजी प्रदाताओं के दायरे के विस्तार के संदर्भ में देखना होगा, जो विद्यार्थियों का सरकारी

तालिका 2 – प्रबंधन के प्रकार के अनुसार कर्नाटक में प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने वाले स्कूल (2007-08 से 2011-12 तक)

कर्नाटक	प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने वाले मान्यता-प्राप्त स्कूलों की संख्या	सरकारी स्कूलों की संख्या	मान्यता-प्राप्त निजी स्कूलों की संख्या	सरकारी स्कूलों का प्रतिशत	निजी स्कूलों का प्रतिशत
2011-12	70,896	50,885	19,966	71.77	28.16
2010-11	59,484	46,550	12,903	78.26	21.69
2009-10	58,159	46,325	11,834	79.47	20.38
2008-09	57,517	46,199	11,318	80.32	19.68
2007-08	56,441	45,622	10,819	80.83	19.17

स्रोत– DISE डेटा।

तालिका 3 – प्रबंधन के प्रकार के अनुसार दिल्ली में प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने वाले स्कूल (2007-08 से 2011-12 तक)

दिल्ली	प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने वाले मान्यता-प्राप्त स्कूलों की संख्या	सरकारी स्कूलों की संख्या	मान्यता-प्राप्त निजी स्कूलों की संख्या	सरकारी स्कूलों का प्रतिशत	निजी स्कूलों का प्रतिशत
2011-12	5,064	2,782	2,282	54.94	45.06
2010-11	5,021	2,772	2,249	55.21	44.79
2009-10	4,946	2,733	2,213	54.78	44.36
2008-09	4,930	2,768	2,162	56.15	43.85
2007-08	4,742	2,982	1,760	62.88	37.12

स्रोत– DISE डेटा।

स्कूलों में स्पष्ट विस्थापन, और निजी स्कूलों का तीव्र प्रसार दिखाता है। आर टी ई एक्ट के लक्ष्य को पाने में कथित रूप से निष्क्रिय सरकारी तंत्र के महत्त्व बनाम ऐसे स्कूलों की प्रभाविता पर है जैन और ढोलकिया (2009) ऐसे तर्कों का उनकी व्याविहारिकता और औचित्य की दृष्टि से रामचंद्रन (2009), जैन और सक्सेना (2010) और सारंगपाणी (2009) द्वारा परीक्षण किया जा चुका है। हालाँकि यह शोध पत्र उन तर्कों के बारे में नहीं है, फिर भी यह समझने का प्रयास करता है कि कैसे निजी स्कूल आर टी ई की माँगों से, और विशेष रूप से समावेश को बढ़ावा देने के उनके दायित्व से जूझते और निबटते हैं।

अध्ययन विधि

अध्ययन के व्यापक उद्देश्य थे – (अ) 25% के प्रावधान से संबंधित उपर्युक्त सरकारों के नियमों, दिशानिर्देशों, अधिसूचनाओं की समीक्षा करना और इसका आकलन करना कि प्रशासनिक उपायों से यह कितना लागू हुआ है; (ब) प्रावधान के कार्यान्वयन के प्रशासनिक ढाँचों और प्रक्रियाओं और इसकी क्रियाशीलता की जाँच करना और (स) चयनित निजी गैर-सहायता प्राप्त स्कूलों में इस प्रावधान के अंतर्गत समावेशन की प्रकृति का आकलन करना। इन व्यापक शोध उद्देश्यों के इर्द-गिर्द विशेष शोध प्रश्न तैयार किए गए। वे थे (1) कथित प्रावधान के कार्यान्वयन को सक्षम बनाने के लिए सरकार द्वारा दिए गए मानदंडों की पर्याप्तता, स्पष्टता एवं पहुँच का स्तर क्या है? (2) प्रशासनिक ढाँचे ने इस वैधानिक दायित्व को व्यवहार में लाने के लिए मध्यस्थता किस तरह की? और (3) स्कूलों में समावेशन को सुगम बनाने के दौरान साझेदारों (स्टेकहोल्डर्स) के अनुभव क्या रहे?

अध्ययन के लिए बेंगलुरु और दिल्ली का चयन किया गया, क्योंकि ये शहर आर टी ई के अंतर्गत इस प्रावधान को लागू करने में सबसे आगे थे। दिल्ली के पास पहले ही दिल्ली उच्चय न्याायालय के निर्देश का अनुसरण करते हुए आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्ग

के बच्चों के लिए 25% आरक्षण को लागू करने का अनुभव था, जिसने इस अध्ययन को नया आयाम दिया। कर्नाटक ने आगे बढ़कर इस प्रावधान के कार्यान्वयन के लिए व्यवस्था दुरुस्त करना आरंभ कर दिया था, यद्यपि आर टी ई के अंतर्गत आने वाले राज्य के नियम अप्रैल 2012 में सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के बाद ही अधिसूचित किए गए थे।

बेंगलुरु में बेंगलुरु दक्षिण और बेंगलुरु उत्तर के दो शैक्षणिक जिलों के 36 निजी गैर-सहायता प्राप्त स्कूलों को शामिल किया गया था, जो कि बेंगलुरु शहरी क्षेत्र[10] का हिस्सा हैं। शिक्षा विभाग से 2012-13 में इस प्रावधान को लागू करने वाले स्कूलों की ब्लॉकवार सूचियाँ प्राप्त की गईं। स्कूलों में प्रारंभिक पूछताछ में यह पता चला कि इनमें से अनेक स्कूलों ने यह प्रावधान लागू नहीं किया है, क्योंकि उन्हें इसके लिए कोई आवेदन प्राप्त नहीं हुआ था।

प्रावधान लागू करने वाले स्कूलों में से स्कूलों का चयन सोद्देश्य किया गया था, ताकि विद्यार्थियों के सामाजिक-आर्थिक खाके, उनके स्कूल की बोर्ड विशेष से संबद्धता और स्थान के आधार पर एक विस्तृत श्रेणी प्राप्त हो सके। दिल्ली में हालाँकि 25 स्कूलों के अध्ययन का लक्ष्य था, लेकिन कई स्कूलों ने जवाब नहीं दिया या इसमें सहयोग नहीं किया जिसकी वजह से केवल 16 स्कूलों का ही अध्ययन हो पाया था। स्कूलों की ब्लॉकवार सूची प्राप्त की गई और उनके अंतिम नमूने का चयन दिल्ली के 11 जिलों में से चार जिलों दक्षिण, उत्तर-पूर्वी, मध्य और नयी दिल्ली के स्कूलों में से किया गया। इन जिलों का चयन भौगोलिक विस्तार, जिले के सामाजिक आर्थिक खाके और जिले में स्कूल जाने वाले विद्यार्थियों के सामाजिक-आर्थिक खाके के आधार पर किया गया था।

शोध में कई विधियाँ शामिल की गई थीं जिनमें निजी गैर सहायता प्राप्त स्कूलों का लघु सर्वे, स्कूलों के प्राचार्य, शिक्षकों और माता-पिता का अर्द्ध-नियोजित (सेमी-स्ट्रक्चर्ड) साक्षात्कार, मुख्य सूचनादाता जैसे कि वरिष्ठ सरकारी पदाधिकारी, निजी स्कूल संघों के सदस्य , आर टी ई के क्रियान्वयन की निगरानी करने के लिए अधिकृत संस्थाओं के सदस्यों और प्रावधान से संबद्ध नागरिक संगठनों के सदस्यों का अर्द्ध-नियोजित साक्षात्कार शामिल था। आंकड़े एकत्रित करने के लिए 10 उपकरणों का सेट तैयार किया गया था और इसे आंकड़े एकत्र करने वाली टीम व सहभागी संस्थाओं के साथ आयोजित दो कार्यशालाओं (प्रत्येक शहर में एक) के दौरान अंतिम रूप दिया गया। अध्ययन में 25% प्रावधान से संबंधित सार्वजनिक रूप से उपलब्ध या संबंधित राज्य सरकारों द्वारा उपलब्ध कराए गए द्वितीय डाटा स्रोतों, नियमों और अधिसूचनाओं का विश्लेषण शामिल था। टीम ने अतिरिक्त आंकड़े एकत्रित करने और वास्तविक स्थिति से पूरी तरह अवगत होने के लिए सरकार और नागरिक संगठनों द्वारा इस विषय पर आयोजित बैठकों और जन सुनवाई में भी भाग लिया।

स्कूलों में भ्रमण केवल सरकार की पूर्व-लिखित अनुमति और स्कूलों से समय लेकर ही किया गया। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अनुच्छेद 12(1)(स) एक विवादित प्रावधान रहा है और इस पर न्यायालय में अभी भी मुकदमें चल रहे हैं, ऐसे में निजी स्कूलों में जाकर आंकड़े एकत्र करना आसान काम नहीं था। सरकार द्वारा उपलब्ध कराई गईं दोनों स्कूलों की सूचियाँ पूर्ण रूप से विश्वसनीय नहीं थीं, क्योंकि सूची में शामिल कई स्कूलों ने यह स्वीकार किया कि उन्होंने वास्तव में इस प्रावधान को लागू करने की शुरुआत ही नहीं की है। आंकड़ों के विश्लेषण के लिए स्प्रेडशीट में डेटा कलेक्शन उपकरण से तयशुदा (स्ट्रक्चर्ड) और सीमित विकल्पों वाले प्रश्न (क्लोज़ एंडेड क्वेश्चंस) डाले गए थे। खुले उत्तर वाले प्रश्नों पर जवाब दर्ज किए गए और विश्लेषण के दौरान इन जवाबों की थीम की पहचान की गई। स्कूल भ्रमण के दौरान किए गए अवलोकन और उत्तरदाताओं के साक्षात्कार के आधार पर तैयार की गई विवरणात्मक रिपोर्ट को भी डिज़िटल प्रारूप में तैयार किया गया और फिर अन्य स्रोतों से प्राप्त आंकड़ों के माध्यम से प्रमाणित और त्रिकोणीय तरीके से प्रतिपादित विषय संबंधी मुद्दों की पहचान के लिए उसका विश्लेषण किया गया था। चूँकि अवलोकनों की संख्या और आंकड़ों की मात्रा अपेक्षाकृत कम और गुणात्मक प्रकृति की थी, इसलिए इसका उपयोग करके विवरणात्मक खाते बनाए गए थे। सबसे पहले दोनों शहरों के लिए पृथक रूप से डेटा एंट्री और विश्लेषण का कार्य किया गया और इसके बाद नीति संबंधी विस्तृत निहितार्थों पर टिप्पणी के लिए उनका तुलनात्मक अवलोकन किया गया था।

नियमों और दिशानिर्देशों का विश्लेषण

आर टी ई की धारा 38 राज्य सरकार को (धारा 12 सहित) विशिष्ट प्रावधानों के संबंध में नियम बनाने का अधिकार देती है। इस प्रकार राज्य के नियम निजी स्कूलों की प्रक्रिया और पुनर्भरण राशि सहित धारा 12 को लागू करने के तरीके बताते हैं। नियमों के अतिरिक्त कर्नाटक और दिल्ली की सरकारों ने कथित प्रावधानों के कार्यान्वयन से संबंधित विशिष्ट मामलों में अधिसूचनाएँ भी जारी की हैं।

तालिका 4– कर्नाटक और दिल्ली में जारी किए गए राज्य के नियमों और अतिरिक्त सूचनाओं की समीक्षा

प्रावधान	कर्नाटक	दिल्ली
'सुविधाहीन' और 'कमज़ोर वर्ग' श्रेणियों की परिभाषा	'सुविधाहीन' श्रेणी एससी,एसटी या पिछड़ा वर्ग, अनाथ, विस्थापित और लावारिस बच्चे, मानसिक रूप से कमज़ोर बच्चे और एचआईवी प्रभावित/संक्रमित बच्चे शामिल हैं। 'कमज़ोर वर्ग' की परिभाषा में 350 लाख रुपए से कम की वार्षिक आय वाली अन्य सभी जातियों और समुदायों से संबंधित बच्चे शामिल किए गए हैं, लेकिन इस	'सुविधाहीन' श्रेणी क्रीमीलेयर में नहीं आने वाले एससी, एसटी या अन्यी पिछड़ावर्ग (ओबीसी) के बच्चे और मानसिक रूप से कमज़ोर व विकलांग बच्चे शामिल किए गए हैं। 'कमज़ोर वर्ग' की परिभाषा में ऐसे बच्चे शामिल किए गए हैं जिनके माता-पिता की सभी स्रोतों से वार्षिक आय एक

	पर उनके बच्चों को वरीयता दी जाएगी, जिनकी वार्षिक आय एक लाख रुपए से कम होगी।	लाख रुपए से कम हो। अक्तूबर 2013 में दिल्ली में तीन वर्ष निवास की शर्त हटा दी गई है।
बच्चों के अधिकार	नि:शुल्क पाठ्यपुस्तकें, लेखन सामग्री और यूनिफॉर्म तथा विकलांग बच्चों के लिए नि:शुल्क विशेष अध्ययन और सहायक सामग्री	नि:शुल्क पाठ्यपुस्तकें, लेखन सामग्री और यूनिफॉर्म तथा विकलांग बच्चों के लिए नि:शुल्क विशेष अध्ययन और सहायक सामग्री
वित्तीय पुनर्भरण	कक्षा 1 के लिए 11,848 रुपए प्रतिवर्ष और प्री-स्कूल प्रवेश के लिए 5,924 रुपए प्रतिवर्ष	कक्षा 1 के लिए 11,900 रुपए प्रतिवर्ष

स्रोत– DISE डेटा।

प्रवेश की प्रक्रिया का निर्धारण करने वाले नियम दोनों राज्यों में समान ही हैं। स्कूलों के लिए अपने नोटिस बोर्ड पर उपलब्ध सीटें, प्रवेश और प्रतीक्षा सूचियाँ प्रदर्शित करना आवश्यक है। नि:शुल्क सीटों के लिए आवेदन करने वाले व्यक्तियों से कोई भी पंजीकरण शुल्क या विवरणिका शुल्क नहीं लिया जा सकता। वेबसाइट पर एक सामान्य आवेदन पत्र नि:शुल्क उपलब्ध होना चाहिए और इसी का उपयोग अभिभावक कर सकते हैं। यदि उपलब्ध सीटों से अधिक आवेदन आते हैं तो चयन, अभिभावकों और शिक्षा विभाग के एक अधिकारी की उपस्थिति में लॉटरी विधि द्वारा किया जाता है। लॉटरी प्रक्रिया की वीडियोग्राफ़ी की जाती है और रिकॉर्डिंग को चयनित प्रत्याशियों की सूची के साथ लॉटरी के दिवस के एक दिन के भीतर विभाग में भेजा जाता है। कर्नाटक में यदि एस.सी सूची (7.5%) के बच्चों से पर्याप्त सीटें नहीं भरी जा सकती हैं तो उन्हें एसटी सूची (1.5%) के बच्चों से भरा जाता है और इसी प्रकार विपरीत क्रम में भी होता है। यदि ये दोनों सूचियाँ नहीं भरी जाती हैं, तो उन्हें सुविधाहीन और अन्य और सभी कमज़ोर वर्गों (16%) से भरा जाता है। यदि अन्य सभी वर्गों की सीटें नहीं भरी जाती हैं, तो उन्हें एससी और एसटी सूची के बच्चों द्वारा भरना होगा। दिल्ली में स्कूलों से अपेक्षा की जाती है कि वे नि:शुल्क सीटों और सामान्य सीटों पर चयनित बच्चों की सूची अपने नोटिस बोर्ड पर वर्णानुक्रम में प्रस्तुत करें लेकिन सामान्य वर्ग के विद्यार्थियों के नाम के आगे “G” चिन्हित किया जाए। खाली सीट होने के मामले में, प्रवेश के लिए इनको पुन: अधिसूचित किया जाना चाहिए।

हालाँकि, अधिसूचना कार्यान्वयन करने हेतु आवश्यक प्रक्रिया प्रारंभ करने के लिए न्यूनतम रूपरेखा प्रदान करती है, विभिन्न आधारों पर यह दोनों ही राज्यों में अपर्याप्त रही हैं।

पहला यह कि सुविधाहीन श्रेणियों की अपरिवर्तनीय (क्लोज़ एंडेड) सूची में बच्चों का वर्गीकरण विभिन्न सुविधाहीनताओं वाले बच्चों के अनुभवजन्य प्रश्न को संबोधित नहीं करता। यह

अस्पष्ट है कि क्या एक से अधिक 'असुविधा' से जूझ रहे बच्चों को वरीयता प्राप्त होगी या प्रवेश के लिए लॉटरी के दौरान भी इन्हें अलग तरीके से लाया जाएगा।

दूसरा, दोनों ही राज्यों के नियमों में 'सुविधाहीन' के वर्गीकरण को मूल कानून की धारा 2(द) के तहत प्रदान की गई लंबी परिवर्तनीय (ओपन एंडड) सूची की श्रेणियों के उपसमूह तक सीमित किया गया है। उदाहरण के लिए, भाषा और जेंडर के कारण होने वाली सुविधाहीनता, जिनमें से दोनों का उल्लेख कानून में किया गया है, को किसी भी राज्य के नियम के तहत 'सुविधाहीनता' के रूप में अधिसूचित नहीं किया गया है। 'सुविधाहीन' व्यक्ति की राज्य स्तर की परिभाषाओं में मौज़ूद इस असंगति को देखते हुए (दिल्ली में एचआईवी से प्रभावित बच्चे शामिल नहीं हैं और कर्नाटक में अक्षम बच्चे शामिल नहीं हैं) उन आधारों के संबंध में सवाल उठाना उचित है कि कानून के अंतर्गत निर्दिष्ट विस्तृत 'पूल' से कुछ श्रेणियों को बाहर रखने या शामिल करने के इन निर्णयों का आधार क्या है और परिणामस्वरूप ऐसी महत्वपूर्ण चूकों के संबंध में सुविधाहीन राज्य की प्रभावहीन परिभाषाओं के ऊपर केंद्रीय मानदंडों की आवश्यकता है।

तीसरे, जबकि प्रावधान के अंतर्गत पात्रता के प्रमाण की आवश्यकता प्रवेश के लिए अविनिमेय है, यह कुछ श्रेणियों की इस वास्तविकता को नज़रअंदाज़ करती है सड़क पर रहने वाले और प्रवासी बच्चे, जिन्हें आवश्यक प्रमाण प्राप्त करने हेतु नौकरशाही मशीनरी तक पहुँचने और उससे व्यवहार करने में कठिनाई हो सकती है।

चौथा, किसी पड़ोस के स्कूल में बच्चों को भेजने की आवश्यकता को मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा इस विषय में जारी किए गए दिशानिर्देशों में ढील दी गई है, फिर भी 25% कोटा के प्रवेश के मामले में पड़ोस और दूरी के नियमों का पालन सख्ती से किया जाता है। प्राय: स्कूल, विशेष रूप से बेंगलुरु और दिल्ली जैसे शहरों के स्कूल, पड़ोस के अवासीय क्षेत्रों में नहीं होते और इसीलिए ऐसे स्कूलों में ठीक उसी दूरी के भीतर रहने वाले बच्चों द्वारा पड़ोस के प्रावधानों का लाभ लेने की संभावना कम है। दिल्ली में प्रवेश का एक से अधिक दौर चलकर रिक्त स्थानों को भरने का प्रावधान है, बेंगलुरु में इसका प्रावधान नहीं है और ऐसे स्कूलों में सीटें रिक्त ही रह गईं।

पाँचवा, 2012 में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा आर टी ई कोटा के प्रवेशों के कोटा में कोटा को गैर-कानूनी और कानून के प्रावधानों के विपरीत माना गया है, जबकि कर्नाटक के नियम कोटा के भीतर कोटा उपलब्ध कराते हैं।

छठा, जहाँ दिल्ली के हमारे आंकड़ों ने प्री-स्कूल में प्रवेशों के लिए पुनर्भरण हेतु प्रति बालक व्यय दर प्रकट नहीं की, बेंगलुरु हेतु निर्धारित की गई दर, स्वमयं सरकार की तरफ से ही विवेकाधीन है, क्योंकि इसको कक्षा 1 हेतु प्रति बच्चे व्यय राशि को आधा करके निकाला गया था।

सातवाँ, बेंगलुरु में अनुपालन रिपोर्ट का प्रारूप मूल रूप से समस्याग्रस्त पाया गया। इसमें बच्चों की अकादमिक ग्रेडिंग शामिल है और यह पहले से ही मानकर चलता है कि सुविधाहीन और आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्गों के बच्चों का प्रदर्शन खराब होने की संभावना है और इसलिए इनके लिए विशेष प्रशिक्षण आवश्यक है। हालाँकि, आर टी ई के तहत रोक लगाना वर्जित है, लेकिन यह प्रारूप रोके गए बच्चों के बारे में खोजबीन करता है और ऐसी स्थितियाँ (जैसे– उपस्थिति, प्रदर्शन और अनुशासनात्मक आधार) सुझाता है जिससे अन्य बच्चों को रोकना न्यायोचित ठहराया जाता। यह प्रारूप इस प्रावधान के तहत प्रवेश दिए गए बच्चों की 'स्कूली आदतों' के बारे में भी जाँच पड़ताल करता है। जहाँ बच्चों के बारे में रिपोर्ट स्कूलों से माँगी जाती है, अनुपालन रिपोर्ट के एक भाग के रूप में समावेशन के मामले में स्कूल के प्रदर्शन के बारे में फ़ीडबैक देने का कोई अवसर अभिभावकों के लिए उपलब्ध नहीं है। रिपोर्टिंग का उत्तरदायित्व सुनिश्चित करने वाले प्रमुख उपकरणों में से एक बनाए जाने के मद्देनज़र (वित्तीय रिपोर्ट और परीक्षणों को छोड़कर), अपर्याप्त रिपोर्टिंग व्यवस्था पर गंभीरता से पुनर्विचार करने और इसका पुनरीक्षण करने की आवश्यकता है।

आठवाँ, स्कूल के नोटिस बोर्ड पर बच्चों पर नाम प्रदर्शित करने की आवश्यकता, खास तौर पर उनकी स्थिति को चिन्हित करते हुए, जैसा कि दिल्ली में आर टी ई कोटा के अंतर्गत स्वीकृत है, पारदर्शिता को सुनिश्चित करने में सहायक हो सकता है, लेकिन इससे बच्चों को 'लेबल' किए जाने की प्रवृति उत्पन्न होती है और इससे उनके साथ भेदभाव का आधार बनता है।

नौंवा, हालाँकि दोनों ही सरकारों ने अपनी संबंधित वेबसाइटों पर पड़ोसी स्कूलों और उपलब्ध सीटों के साथ अपनी अधिसूचनाएँ लगाई हैं, यह भाषा (कानूनी शब्दावली के उपयोग, द्विभाषिक सामग्री के अभाव) और प्रस्तुति की समस्याओं के कारण बोधगम्य नहीं हैं। अन्य शब्दों में, वेबसाइटें पड़ोसी निजी गैर-सहायता प्राप्त स्कूलों में प्रवेश पाने के संबंध में उन योग्य परिवारों को दिशानिर्देश देने में बहुत सहायक नहीं है।

मुख्य निष्कर्ष

अध्ययन दर्शाता है कि 25% के आर टी ई प्रावधानों के कार्यान्वयन का अनुभव दोनों शहरों में कुछ मानदंडों पर समान है, फिर भी कुछ संदर्भों में यह स्पष्ट रूप से असमान है। दोनों शहरों में निजीकरण की बढ़ती हुई प्रवृति को देखते हुए, निजी स्कूलों पर और लाभार्थियों (बच्चों और परिवारों) पर इस प्रावधान के प्रभावों को समझना उपयोगी होगा। यह खंड बेंगलुरु और दिल्ली से निकलने वाले प्रमुख तुलनात्मक निष्कर्षों को दर्शाता है।

प्रशासकीय संरचना और प्रक्रियाएँ

(1) दोनों ही शहरों के शिक्षा विभागों में कर्मचारियों की भारी कमी है। हालाँकि, आर टी ई कानून आने के बाद से विभागों के निर्दिष्ट कार्यों में महत्वंपूर्ण वृद्धि हुई है, लेकिन पब्लिक स्कूल प्रणाली के सशक्तिकरण सहित, आर टी ई के तहत सभी कर्त्तव्यों के प्रभावी निर्वहन के

लिए आवश्यक मानव संसाधन में समानुरूप वृद्धि नहीं हुई है। कानूनी प्रावधानों के बारे में जागरूकता पैदा करना, निजी स्कूलों के अनुपालन को सुनिश्चित करना, स्कूल रिकॉर्ड के सत्यापन और शिकायतों का समाधान जैसे कार्य पर्याप्त मानव संसाधनों की कमी के कारण पिछड़ कर रह गए हैं।

(2) अनुच्छेद 12(1)(स) लागू करने पर विशेष ध्यान दिया गया, फिर भी समग्र रूप में विभिन्न कमियों और देरी के कारण आर टी ई लागू करने में बाधा उत्पन्न1 हुई। दोनों शहरों में 25% प्रावधान लागू करने और निजी स्कूलों को मान्यता देने में कोई संरचनात्मक संबंध नहीं था। उदाहरण के लिए, बुनियादी ढाँचे और शिक्षक मानदंडों पर बहुत कम ध्यान दिया गया और इन्हीं मानदंडों को पूरा करने पर निजी स्कूलों की मान्यता जारी रखने का प्रावधान है। इसलिए, इन स्कूलों में बच्चे बिना मान्यता के पढ़ रहे हैं और अनिवार्य बुनियादी सुविधाओं के बिना भी इन्हें सरकार की ओर से सहायता राशि मिलती रहेगी।

(3) आर टी ई के प्रावधानों और विशेष रूप से इन प्रावधानों के तहत मिलने वाले लाभों के लिए दावा करने की प्रक्रिया के बारे में सुविधाहीन और कमज़ोर वर्ग में जागरूकता का अभाव है। सरकार द्वारा उपयोग में लाए जा रहे प्रसार के वर्तमान माध्यम (वेबसाइट, प्रिंट मीडिया) भाषा या पहुँच की दृष्टि से आसानी से उपलब्ध नहीं हैं।

(4) विभागों ने अपनी ओर से आगे बढ़कर प्रवेश प्रक्रिया और औपचारिकताओं को सरल नहीं बनाया, जो ऐसी चीज़ है जिसे सर्वाधिक वंचित बच्चों और उनके परिवारों की व्यावाहारिक समझ के आधार पर हासिल किया जा सकता है। नौकरशाही के अत्यधिक दखल और पारदर्शिता के अभाव के कारण ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गई है, जिसमें अक्सर ऐसे लोग जो व्यवस्था से निबट सकते हैं, वे ही इस प्रावधान के तहत अपने बच्चे का प्रवेश करा लेते हैं। जैसा कि दोनों शहरों में सामने आया था, आय या जाति प्रमाण पत्र बनाने के संदर्भ में योग्यता प्रमाणित करने की आवश्यकताएँ जटिल और महँगी हैं जिससे इसमें देरी, उत्पीड़न और भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता है। कर्नाटक के लोकायुक्त ने 'जाली आय प्रमाण' देने वाले गिरोह का संज्ञान लिया और जाँच बैठाई लेकिन आय प्रमाण-पत्र प्राप्त करने संबंधी चुनौतियाँ अभी भी बनी हुई हैं। योग्यता संबंधी आवश्यक प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के लिए कुछ पूँजी की आवश्यकता होती है, जो दोनों ही वंचित समूहों के लिए आसानी से उपलब्ध नहीं होती है। इसका अर्थ यह है कि सामाजिक-आर्थिक दृष्टि से सबसे अधिक ज़रूरत वाले लोगों पर अभी भी पूर्ण रूप से ध्यान नहीं दिया जा रहा है और अंत में उन्हें सरकारी स्कूलों में ही प्रवेश लेना पड़ता है।

(5) दोनों शहरों, विशेष रूप से बेंगलुरु के स्कूलों में यह पता चला कि पुनर्भरण राशि प्राप्त करने में देरी होने के साथ इसमें कठिनाई भी आती

है और इसी वजह से स्कूल के सामने सरकारी हस्तक्षेप का मामला बन जाता है। दोनों शहरों के ऐसे कुछ स्कूल जिन्हें पुनर्भरण राशि प्राप्त हो गई थी, वे पुनर्भरण राशि की मात्रा से संतुष्ट नहीं थे और उन्होंने दावा किया कि इन बच्चों के लिए उन्हें स्वयं, वह भी अक्सर सामान्य विद्यार्थियों का शुल्क बढ़ाकर, भुगतान करना पड़ा।

(6) दोनों शहरों में सीट खाली होने संबंधी समस्या का हल विभाग नहीं ढूँढ पाया है, फिर चाहे वह चुने गए विद्यार्थियों के नाम वापस लेने के कारण खाली हुईं हों या स्कूल छोड़ देने के कारण खाली हुई हों, ऐसी स्थिति प्रतीक्षा सूची बनाए जाने के बावजूद है। ऐसी स्थिति में कोई भी खाली सीट स्कूल और विभाग के लिए नुकसान साबित होती है और इस पर भी स्कूलों को यह सीटें खाली रखना आवश्यक है और वे इन पर सामान्य श्रेणी के किसी बच्चे को प्रवेश भी नहीं दे सकते।

(7) अध्ययन में शामिल किए गए स्कूलों में से अधिकांश स्कूल कम फ़ीस लेने वाले थे और वास्तव में वे सरकार द्वारा प्रत्येक बच्चे पर किए जा रहे खर्च से कम फ़ीस ले रहे थे। हालाँकि इन स्कूलों को सरकार द्वारा दी जाने वाली पुनर्भरण राशि का लाभ मिल गया था, फिर भी वे इससे असंतुष्ट थे, क्योंकि सरकार द्वारा प्रत्येक बच्चे पर किए जा रहे खर्च की दर को इसके लागू होने के एक साल बाद भी संशोधित नहीं किया गया था।

(8) बेंगलुरु के विपरीत, दिल्ली के शिक्षा निदेशालय ने स्कूल प्रबंधकों या अभिभावक संघों से नाममात्र का संवाद स्थापित किया। संवाद की इस कमी से दिल्ली में सरकारी और निजी स्कूलों के बीच न केवल दूरी बढ़ गई, बल्कि इससे सरकार को उसके कार्यान्वयन से संबंधित ज़मीनी समस्याएँ और शिकायतें भी आधिकारिक तौर पर अनसुनी रह गईं, जिसके परिणामस्वरूप इनका पता नहीं चल पाया।

(9) दोनों शहरों में, सरकार ने इस प्रावधान के लागू होने के एक साल बाद भी इसके कार्यान्वयन के बारे में एक भी रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं की है।

स्कूलों में समावेशन

(1) दोनों शहरों में कुछ सुविधाहीन समूह जैसे विकलांग बच्चे सुविधाहीन बच्चों के बड़े समूह में शामिल होने से वंचित रह गए हैं और जिन स्कूलों में भ्रमण किया गया, उनमें इन्हें प्रवेश नहीं मिला था। बेंगलुरु में यह पाया गया कि अनाथ, लावारिस व विस्थापित बच्चों और एचआईवी के साथ जी रहे बच्चों को प्रवेश नहीं दिया गया है। इसके विपरीत, बेंगलुरु में एससी, एसटी और अन्यच पिछड़ी जातियों/ अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) को इसके तहत उनका अधिकार मिला हुआ था। बेंगलुरु में ओबीसी श्रेणी सर्वाधिक लाभान्वित है। बेंगलुरु में उपलब्ध कराए गए आधिकारिक आंकड़ों में अन्य सुविधाहीन श्रेणियों वाले बच्चों, जिन्हें प्रवेश दिया गया था, की गणना तक नहीं थी।

(2) स्कूलों में बच्चों के बीच का सामंजस्य काफ़ी हद तक सकारात्मक दिखा, क्योंकि बच्चे बहुत कम उम्र के थे और उन्हें आपसी भिन्नताओं के बारे में पता नहीं था। हालाँकि, स्कूलों ने यह संकेत दिया कि बच्चों के बड़े होने पर और सामाजिक भिन्नताओं में ध्यान देना शुरू करने पर उनके सामने समस्याएँ आ सकती हैं।

(3) उच्च श्रेणी वाले स्कूलों की तुलना में ऐसे स्कूलों में, जहाँ निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले बच्चे पढ़ते हैं, सामाजिक सामंजस्य आसानी से स्थापित हो गया, क्योंकि वहाँ 25% सीट के कोटे में प्रवेश लेने वाले बच्चों और अन्य बच्चों के बीच के सामाजिक अंतर को आसानी से नहीं देखा जा सकता था। ऐसे स्कूलों में जहाँ निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले समुदायों के बच्चे पढ़ते हैं, बताया गया कि अन्य 75% विद्यार्थियों के माता-पिता ने भी अपने बच्चों को मुफ्त सीट देने की माँग की है।

(4) माता-पिता ने निजी स्कूलों को इसलिए वरीयता दी क्यों कि वे स्कूल से अपनी गुणवत्ता संबंधी अपेक्षाओं को पूरा करने की उम्मीद रखते थे। उनकी बुनियादी सोच थी कि सरकारी स्कूल गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा नहीं देते और ऐसे में निजी स्कूल ही बेहतर विकल्प हैं।

(5) माता-पिता अकादमिक सहायता देने में कठिनाई महसूस करते हैं, लेकिन वे बच्चों को कपड़े, भोजन और स्कूल से संबंधी प्रावधानों में भौतिक सहयोग देने में सक्षम हैं।

(6) समावेशन को बढ़ावा देने के मामले में शिक्षक और स्कूल को समर्थन नहीं मिला था। अधिकांश स्कूलों ने यह मान लिया कि एक बार प्रवेश देकर उन्होंने आदेश का पालन कर दिया और इसलिए वे नज़रिए और शिक्षाशास्त्र में कोई ऐसा मूलभूत बदलाव लाने के लिए कार्य नहीं कर रहे हैं, जो समावेशन को बढ़ावा दे सके।

(7) प्राप्त जानकारी के अनुसार स्कूल प्रबंधनों को पुनर्भरण राशि देने की प्रक्रिया में सरकारी विलंब और अत्यधिक सरकारी व्यवधान के कारण कथित तौर पर कठिनाई का सामना करना पड़ा।

(8) निश्चित रूप से स्कूलों में बच्चों की नियमितता और वहाँ बने रहने को लेकर चिंता का अहसास है। स्कूलों की चिंता यह थी कि उच्च कक्षाओं में पहुँचने पर बच्चों को घर से अधिक वित्तीय और अकादमिक सहयोग की ज़रूरत होगी, हो सकता है जिसे उनका परिवार पूरा कर पाने में सक्षम न हो। हालाँकि, यह सुनिश्चित करने के लिए कि बच्चे अपनी शिक्षा पूरी करें, स्कूलों के भीतर, स्कूलों के बीच या यहाँ तक कि स्कूलों और प्रबंधन के बीच सलाह और संवाद कम ही है।

शिकायत निवारण और निगरानी

शासनादेश के अनुसार राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित स्थानीय प्राधिकरण के माध्यम से शिकायत निवारण की व्यवस्था है, लेकिन निवारण का यह प्रथम स्तर किसी भी शहर में पूरी तरह कार्य नहीं कर रहा था। इन प्राधिकरणों तक कभी-कभार ही लोग पहुँच पाते हैं और इस बारे में कभी कोई स्पष्टता नहीं दिखी

कि ये कैसे काम करेंगे? शिकायत निवारण संबंधी कार्यों और उन्हें प्रभावी बनाने के तरीके के बारे में स्वयं इन विभागों के भीतर जागरूकता लगभग नहीं के बराबर है। यहाँ तक कि राज्य बाल अधिकार संरक्षण आयोग भी समुचित संसाधनों और बुनियादी सुविधाओं के अभाव में संघर्ष कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त, इन तथ्यों के आधार पर कि आयोग द्वारा की गई अनुशंसाएँ केवल सिफ़ारिशी होती हैं और यह बाध्यकारी नहीं होतीं, उनको दोषियों को रोकने के लिए मज़बूत आधार नहीं मिलता।

उभरते मसले

कार्यान्वयन की दृष्टि से देखें तो दोनों शहरों के आंकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि निजी स्कूलों में 25% कोटा देने का मुद्दा शिक्षा नीति और कार्यप्रणाली संबंधी अन्य प्रश्नों से जुड़ा हुआ है। इन्हें आगे संक्षेप में बताया गया है–

प्रावधान का दायरा– अंतर्राष्ट्रीय बोर्ड से संबंद्ध स्कूल और आवासीय स्कूल जैसे कुछ प्रकार के स्कूलों पर इस प्रावधान को लागू करने में अस्पष्टता है। ये स्कूल, गैर-सहायता प्राप्त निजी स्कूलों की श्रेणी के एक छोर पर आते हैं, जो वास्तव में इसके दायरे से बाहर रह जाते हैं और इसलिए इस प्रावधान के माध्यम से सामाजिक न्याय और अवसर की समानता उपलब्ध कराने का विचार अर्थहीन हो गया है।

अभिभावकीय पसंद– अभिभावकों के बीच 'अच्छे' स्कूल का विचार निजी स्कूलों की उनकी कल्पना का समर्थन और ये स्कूल जो उपलब्ध करा रहे हैं, उसका अनुमोदन करता है। दोनों ही शहरों में, 'निजी' के प्रति खासा आकर्षण देखा गया जहाँ अभिभावक गुणवत्ता के अपने स्वयं के मापदंड के आधार पर विकल्प चुनते हैं। दोनों ही शहरों में कुछ स्कूलों को हाथों हाथ लिया गया, वहीं अन्य को पूछने वाला कोई नहीं था। आमतौर पर ऐसे स्कूलों को चुना गया जो थोड़े अधिक उच्चतर सामाजिक-आर्थिक तबके की आवश्यकताओं का ध्यान रखते हैं। इस प्रकार, प्रावधान को ऊपर की ओर गतिशीलता के उपकरण के रूप में देखा और उपयोग किया गया।

संगठित साझेदारों के रूप में अभिभावकों का उभार– दोनों ही शहरों में, मध्यम-वर्गीय अभिभावक, जिनकी पहुँच निजी शिक्षा तक है लेकिन जो 25 प्रतिशत वाले प्रावधान के अंतर्गत नहीं आते हैं, उनका एक प्रमुख और सशक्त साझीदार के रूप में उत्थान हो रहा है। वे फ़ीस वृद्धि तथा निजी क्षेत्र के नियंत्रण संबंधी बड़ी नीतिगत समस्याओं पर रुख तय करने के लिए एकजुट हैं, जो अपने बच्चे की शैक्षणिक प्रगति और स्कूली शिक्षा की पहले वाली सीमित सोच से हटना है। इन साझेदारों को इस बात पर कि स्कूलों द्वारा इस प्रावधान के अंतर्गत वंचित वर्ग के बच्चों को शामिल करने के मामले में कैसा व्यवहार किया जाता है, अपने बढ़ते प्रभाव का इस्तेमाल करते देखा जा सकता है।

स्कूली नेटवर्क– संगठित स्कूली नेटवर्क तथा निजी स्कूलों के संगठन राज्य के चुनौतीपूर्ण हस्तक्षेप के लिए समान फोरम बनते जा रहे हैं और इन नेटवर्कों

की सदस्यता को निजी स्कूलों को एकजुटता और सुरक्षा भाव प्रदान करने के रूप में देखा जाता है। उदाहरण के लिए, माना जाता है कि स्कूलों द्वारा उन अतिरिक्त खर्चों की पूर्ति के लिए पिछले कुछ वर्षों में फ़ीस वृद्धि की जाती रही है, जो आर टी ई द्वारा लगाया जा रहा है और वे अपने निजी स्कूल संगठनों के माध्यम से फ़ीस नियंत्रण में राज्य के हस्तक्षेप का विरोध भी कर रहे हैं।

अल्पसंख्यक संस्थान एवं आर टी ई की व्यावहारिकता – स्कूलों के लिए अल्पसंख्यक का दर्जा हासिल करने की होड़ को सुप्रीम कोर्ट के निर्णयों द्वारा, सबसे पहले 2012 में और हाल ही में 2014 में वर्णित किया गया है, जिससे ऐसे स्कूल आर टी ई कानून की परिधि में आने से बच जाते हैं। दोनों ही शहरों में यह स्पष्ट रूप से दिख रहा है और ऐसा दर्जा देने के मामले में नीतिगत अस्पष्टता और विवाद की बड़ी भूमिका है।

वैधानिक उद्देश्य को व्यवहार में लाना – विभिन्न साझेदारों के बीच आर टी ई तथा उसके उद्देश्यों के प्रति कम समझ है। इस अंतर के कारण, स्कूल कानून के मूल आशय को व्यवहार में लाने में विफ़ल रहते हैं। दूसरे शब्दों में, प्रावधान को केवल ऊपर से नीचे जाने वाले कार्यक्रम के रूप में माना जाता है, लेकिन स्कूल के स्तर पर बच्चों का सामंजस्य सुनिश्चित करने में बहुत कम ही ध्यान दिया जाता है। इस प्रकार, बजाय इसके कि बच्चों को माहौल से सामंजस्य बैठाना, सीखना-समझना और एक-दूसरे से जुड़ना सिखाया जाए, सारा ध्यान केवल बच्चों को स्कूल में लाने के आसान और सतही लक्ष्य पर केंद्रित रहता है।

'आर टी ई वाले बच्चों ' के प्रति हीन भावना रखना – निजी स्कूल के शिक्षकों के बीच ऐसा दृढ़ विश्वास है कि बच्चे की शिक्षा में घरेलू वातावरण की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। ऐसा समझा जाता है कि 'आर टी ई वाले बच्चे' हीन पृष्ठभूमि से आते हैं और इसलिए स्कूल तथा शिक्षकों की भूमिका बच्चे की बुरी आदतें छुड़ाना और परिष्कृत माहौल में उनका सामंजस्य स्थापित कराना है। ऐसे संरक्षणात्मक रवैये के कारण बच्चों के अधिकारों और गरिमा का अपमान होता है और 'आर टी ई वाले बच्चे' के तमगे का वास्तविक परिणाम भेदभाव के रूप में सामने आता है।

समावेशन में शिक्षकों की भूमिका – समावेशन को गति देने के लिए अपनी भूमिका के बारे में शिक्षकों ने बहुत कम विचार किया है और स्कूलों द्वारा अपनी क्षमताओं में वृद्धि करने के लिए ऐसा कोई भी प्रयास नहीं किया जा रहा है जिससे वे अपनी कक्षाओं में वास्तविक बदलाव ला सकें। अधिकांश स्कूल और शिक्षक सामंजस्य स्थापित करने वाली शैक्षणिक रणनीतियाँ बनाने के अपने माध्यम का उपयोग करने के बजाय यथास्थिति बनाए रखते हैं।

प्रावधान की निरंतरता – स्कूल प्रावधान की निरंतरता के बारे में अनिश्चिताएँ हैं क्योंकि बच्चे अगली कक्षा में चले जाते हैं और वे आर टी ई के अंतर्गत 'फ़ेल नहीं करने' की नीति के आलोचक हैं जो बच्चों को बिना वास्तविक महारत हासिल किए ही आठ वर्षों की शिक्षा पूरी कर लेने को मुमकिन बना देता है।

नीति के निहितार्थ–

जैसी कि पहले चर्चा की गई है, 25 प्रतिशत का प्रावधान विवादास्पद रहा है और प्रावधान के प्रयोजन और प्रकृति पर शिक्षाविदों, नागरिक संगठन कार्यकर्त्ताओं और नीति निर्माताओं के बीच की स्थितियों का ध्रुवीकरण देखा गया है। प्रावधान के पक्षधरों ने, निजी स्कूलों में मिल सकने वाली 'बेहतर गुणवत्ता' वाली शिक्षा की पहुँच प्रदान करने और प्रारंभिक शिक्षा के सार्वजनीकरण में निजी स्कूलों द्वारा अपनी भूमिकाओं को निभाने में उनके कर्त्तव्यों (जो अब तक गैर-समावेशीकरण वाले रहे) के संदर्भ में, मुख्यता इस प्रावधान के समावेशन वाले बिदुं पर ही ज़ोर दिया है। जैसा कि हमने देखा है, ऐसे तर्क सरकारी स्कूल प्रणाली की कथित निष्क्रियता वाली छवि के बरक्स निजी शिक्षण की ओर जा रहे देशव्यापी रुझान और निजी स्कूलों की कथित दक्षता से मेल खाते हैं। हालाँकि, कई समर्थकों ने भी इस प्रावधान को सरकार द्वारा स्कूल की ऐसी प्रणाली की ओर जाने वाला बताया है जहाँ राज्य पूँजी लगाने वाले की भूमिका में है और निजी क्षेत्र शिक्षा उपलब्ध कराने वाले की प्रमुख भूमिका में। वहीं दूसरी ओर, अधिक मुखर आलोचक इस प्रावधान को इसके आशय में प्रतीक मात्र के रूप में देखते हैं ओर हाल ही के वर्षों में सरकार द्वारा बाज़ार की ताकतों को खुली छूट देने की समग्र नव-उदारवादी नीति के मुखौटे के रूप में लेते हैं।

प्रावधान के कार्यान्वयन को आगे बढ़ाने वाली विस्तृत चर्चाओं तथा विरोधाभासी खींचतान और दबावों के अंतर्गत इस अध्ययन के नीतिगत निहितार्थ को आवश्यक रूप से संदर्भगत करना होगा। साथ ही, अध्ययन में चुनी गई जगहों की सीमित संख्या और प्रावधान के क्रियान्वयन के शुरुआती दिनों को देखते हुए इस अध्ययन विशेष के सामान्यीकरण की संभावना भी एक हद तक है। विशेष रूप से दूसरे कारण के निहितार्थ उस दायरे तक रहे, जहाँ तक प्रावधान के प्रभाव में आने के बाद शुरुआती अवस्थाओं में कार्यान्वयन में संलग्न संस्थाएँ और प्रणालियों को गतिमान एवं प्रभावी तरीके से सक्रिय बनाया जा सकता था। उदाहरण के लिए, शिकायत निवारण और निगरानी के लिए बनी संरचनाएं और प्रणालियाँ या तो मौज़ूद नहीं थीं या उन्होंने कार्य करना प्रारंभ नहीं किया था। इन सीमाओं के बावजूद इस अध्ययन से महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्राप्त होती है जिससे प्रावधान लागू करने से संबंधित उभरती प्रणालियों एवं प्रक्रियाओं को सशक्त बनाने में सहायता मिलेगी।

सबसे **पहले,** जैसा कि कर्नाटक में हो रहा है, शिक्षा विभागों को बेशक एक विशिष्ट आर टी ई इकाई के प्रावधान के साथ सशक्त बनाना होगा। हालाँकि, कर्नाटक के विपरीत, इस तरह की इकाई आर टी ई के अंतर्गत सरकार के तीन कार्यों-प्रावधान, धन की व्यवस्था और स्कूलों के नियंत्रण को संबद्ध और सम्मिलित करने की शुरुआत करने में सक्षम होगी और आर टी ई के अंतर्गत राज्य के आदेश को पूरा करने के लिए एक एकीकृत प्रणाली को उपलब्ध कराएगी और उसका समन्वयन करेगी। आरंभ में, इस तरह की इकाई को प्रावधान के संबंध में अभी

तक अस्पष्ट तथा अनसुलझे सवालों को परिभाषित करने और परिसीमित करने के लिए राज्य सरकार के संबंधित विभागों के साथ घनिष्ठ समन्वयन में काम करना चाहिए।

जैसे कि (1) ऐसे तंत्र जिनसे निजी स्कूलों को मान्यता प्रदान करने वाली प्रणाली को निजी स्कूलों में धारा 12(1)(स) के कार्यान्वयन से जोड़ा जा सके; (2) राज्य के निजी स्कूलों को छूट के लिए पात्र नहीं होने पर उन्हें ऐसा करने से रोकने के लिए अल्पसंख्यक स्कूलों की परिभाषा तथा राज्य में अल्पसंख्यक संस्थानों की स्थिति; (3) इस संबंध में दिशानिर्देश कि प्रावधान कुछ स्कूलों, विशेषकर अंतर्राष्ट्रीय बोर्ड तथा आवासीय स्कूलों पर किस तरह लागू होगा तथा ऐसे नियमों की स्पष्ट परिभाषा जहाँ स्कूलों के आस-पास आवासीय क्षेत्र नहीं हों; (4) इस बारे में स्पष्टीकरण कि यदि नियम में है तो, प्रावधान के परिणामस्वरूप वंचित वर्ग के बच्चों द्वारा होने वाले 'अतिरिक्त खर्चों' का ब्यौरा क्या है, और इन अतिरिक्त खर्चों की पूर्ति करने के लिए निजी स्कूलों के कर्त्तव्यों का स्पष्टीकरण अनिवार्य है।

दूसरा, वर्तमान अस्पष्ट प्रावधानों पर स्पष्टता सुनिश्चित करना आर टी ई, के अंतर्गत परिकल्पित स्थानीय प्राधिकरणों और राज्य बाल अधिकार संरक्षण आयोगों नामक निगरानी प्रणाली की भूमिका को कमज़ोर नहीं करता है। राज्य सरकारों को इन स्वतंत्र ढ़ाँचों को पर्याप्त धन और मानव संसाधन उपलब्ध करके इन्हें मज़बूत करना चाहिए ताकि वे प्रभावी ढंग से कार्य कर सकें। इसके अलावा, राज्य सरकारों को इन निकायों द्वारा की गई सिफ़ारिशों और निर्णयों पर गंभीरता से विचार करना चाहिए और उनको लागू करना चाहिए। इन निकायों की कार्यप्रणाली और शक्तियों का जन माध्यमों और नागरिक संगठनों, दोनों के ज़रिए व्यापक रूप से प्रचार किया जाना चाहिए, ताकि पीड़ित पक्ष आर टी ई द्वारा प्रदान किए गए मंचों तक पहुँच सकें। वास्तव में, इस संदर्भ में हाल ही में किए गए अध्ययन से यह बात सामने आई है कि शिक्षा विभाग की प्रशासनिक संस्थाओं की 'आंतरिक गतिशीलता' अक्सर इच्छित उद्देश्यों की प्राप्ति में बाधक बन जाती है (शर्मा और रामचंद्रन 2009), ये स्वतंत्र संस्थाएँ और प्रक्रियाएँ ऐसे साधन बन सकती हैं जिनके ज़रिए विभाग की जवाबदेही स्वंयं मज़बूत होती है।

तीसरा, शिक्षा विभाग अपनी मौजूदा चुनौतियों और बाधाओं के बावजूद पहले से अधिक लक्ष्य-केंद्रित नियामक भूमिका अपनाकर प्रावधान के कार्यान्वयन को ठोस तरीके से मज़बूती देने में सक्षम होगा। यह भूमिका अनिवार्य रूप से ऐसी बनानी होगी, जो दोनों संभावनाओं- प्रावधान के स्पष्ट उल्लंघन और प्रावधान पर असर डालने वाले अस्पष्ट अनपेक्षित परिणामों पर नज़र रखेगी। पहली संभावना से तो निजी स्कूलों को दी गई 'मान्यता' और मान्यता के मानदंडों के औचक निरीक्षण से सुरक्षित हुआ जा सकता है। साथ ही, गरीब बच्चों के कारण 'अतिरिक्त लागत' के नियमों को पूरा करने में निजी स्कूलों के लगाव और समावेशन को बढ़ावा देने वाले स्कूलों के अनुपालन का औचक

निरीक्षण से सुरक्षित हुआ जा सकता है। शिक्षा के पारिस्थितिकी तंत्र में धीरे-धीरे एक मज़बूत प्रहरी के रूप में नागरिक समाज के उभार के मद्देनज़र नागरिक समाज की सक्रिय भूमिका को समर्थन देकर ऐसा माहौल बनाया जा सकता है जहाँ, दो विपरीत स्थितियों में एक-दूसरे में सुधार लाया जा सकता है।

विभाग प्रभावी ढंग से इन प्रक्रियाओं पर नज़र रखने के लिए नागरिक संगठनों से मिलकर घनिष्ठ सहयोग के साथ काम कर सकता है। कर्नाटक की तरह 'शिक्षा विभाग' 25% सीटें बीच में छोड़ देने के मामलों और इसके कारण' जैसे मुद्दों के बारे में जानकारी देने वाली स्कूलों की अनुपालना रिपोर्ट के लिए प्रारूप तैयार कर सकता है। वर्तमान में स्कूल की फ़ीस में बढ़ोतरी की उभरती प्रवृति में अधिक अंतर्निहित अनपेक्षित परिणाम यह दिखता है कि 25% प्रावधान के कारण हुए व्यय को स्कूल 'अतिरिक्त लागत' के रूप में युक्तिसंगत बनाना चाहते हैं। इस तरह के उपाय से भी आर टी ई कोटे के तहत प्रवेश लेने वाले बच्चों के माता-पिता और सामान्या छात्रों के माता-पिता के बीच ध्रुवीकरण का मार्ग प्रशस्त हो सकता है, जिससे समावेशन को हासिल करना अधिक कठिन हो जाएगा। इसलिए, शिक्षा विभाग की नियामक वाली भूमिका का विस्तार फ़ीस संरचना और निजी स्कूलों में की जाने वाली बढ़ोतरी की छानबीन करने और इस तरह की बढ़ोतरी के वित्तीय तर्क की जाँच करने के लिए भी किया जाना चाहिए। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि निजी स्कूलों द्वारा 'नियमित रूप से स्कूल जाने वाले बच्चों की बढ़ी हुई फ़ीस' के तर्क को 25% प्रावधान के ख़िलाफ़ अपने प्रमुख मध्यम वर्ग के ग्राहक वर्ग को एकजुट करने के लिए अक्सर लॉबिंग हेतु कारण के रूप में इस्तेमाल किया ला रहा है।

चौथा, निजी स्कूलों को अपने स्तर पर माता-पिता-शिक्षक सम्मेलनों में आर टी ई कानून के तहत प्रवेश ले चुके बच्चों के माता-पिता की भागीदारी सुनिश्चित करानी चाहिए और समय-समय पर जब भी आवश्यक हो, कक्षा संबंधी गतिविधियों को संभालने, शिक्षाशास्त्र को समझने और ज़रूरत के अनुसार उपाय करने से संबंधित कार्यशालाओं का आयोजन करना चाहिए। इसके बदले में, शिक्षा विभागों को प्रवेश, धन की भरपाई और स्कूल के अंदर हो रहे समावेशन के तौर-तरीकों से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर चर्चा करने के लिए ब्लॉक स्तर पर निजी स्कूलों के साथ अधिक बैठकें आयोजित करने का लक्ष्य बनाना चाहिए। इस तरह की बैठकें विचारों को साझा करने, नवाचारों को पहचानने, चुनौतियों की समीक्षा करने और समस्याओं पर चर्चा करने और स्पष्टीकरण रखने का मंच बन सकती हैं। निजी स्कूलों और शिक्षा विभागों दोनों के द्वारा आयोजित किए गए सहभागिता मंचों पर प्रमुख हितधारकों की ओर से वास्तविक समावेशन के लिए अकादमिक और गैर-अकादमिक समर्थन जुटाना चाहिए।

इसी कड़ी में 25% प्रावधान के तहत नहीं आने वाले बच्चों के माता-पिता सहित इन साझेदारों के साथ एक सतत संवाद भी जारी रखना होगा। यह सब

एक ऐसा दृष्टिकोण विकसित करने के लिए होगा जो 25% प्रावधान के तहत आने वाले बच्चों और उनके माता-पिता की चिंता के एक विषय तक सीमित नहीं हो, बल्कि स्कूली समुदाय की सामूहिक ज़िम्मेदारी के रूप में देखा जाता हो।

प्रक्रियाओं को सरल बनाने की आवश्यकता

अंत में, राज्य द्वारा कमज़ोर वर्गों तक पहुँचने के लिए किए गए किसी अन्य प्रयास की तरह ही प्रावधान की सफ़लता का अधिकांश अपनाई गई प्रक्रिया की सरलता पर निर्भर करेगा। शिक्षा विभागों को प्रवेश प्रक्रिया को बाधारहित बनाना चाहिए, ताकि प्रक्रियाओं में पारदर्शिता, निष्पक्षता और सरलता हो। प्रारूपों का मानकीकरण होना चाहिए और ये राज्य में प्रयुक्त, होने वाली क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध होने चाहिए। आवेदनों की प्राप्ति और उनके सत्यापन को विकेंद्रीकृत किया जा सकता है, लेकिन माता-पिता की पसंद को अवसर देने और प्रवेश के लिए अवसरों को बढ़ाने के लिए ब्लॉक स्तर पर प्रवेश को केंद्रीकृत किया जा सकता है। उपलब्ध स्कूलों और सीटों की बेहतर सूची बनाकर और मिलान करके रिक्त सीटों, और इस तरह निराश माता-पिता की संख्या को कम करने की विधि विकसित करनी चाहिए। इसी तरह, शिक्षा विभाग को अपने जिला आयुक्तों के माध्यम से आय, जाति और विकलांगता प्रमाणपत्र जैसे विभिन्न पात्रता प्रमाण-पत्र देने की प्रक्रिया को बाधारहित और सरल बनाना चाहिए। उसमें तेज़ी लानी चाहिए। इसके लिए एकल खिड़की मंज़ूरी अत्यधिक वांछनीय होगी और राज्यों के सार्वजनिक सेवाओं के प्रावधानों के अधिकार के दायरे में इसे लाने पर बहस करनी चाहिए।

अध्ययन से पता चलता है कि कर्नाटक और दिल्ली दोनों के शिक्षा विभागों में अपने-अपने राज्यों में 25% प्रावधान के कार्यान्वयन को प्रभावी बनाने में सबसे आगे रहने का मज़बूत इरादा है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जैसा कि ऊपर बताया गया है, प्रावधान के नियमन और निगरानी के पहलुओं के संदर्भ में बहुत कुछ किया जा सकता है। इस दिशा में पहला महत्वपूर्ण कदम जन मीडिया के माध्यम से प्रावधान के बारे में अधिक जागरूकता फैलाने का होगा। इसके साथ ही, जन जागरूकता अभियान में नागरिक संगठनों के सहयोग से, प्रवेश प्रक्रिया की निगरानी से प्रावधान के अंतर्गत गरीब परिवारों को अधिकार के लिए दावा करने में मदद करने से, शायद आगामी वर्षों में प्रावधान का अधिक प्रभावी तरीके से साकार होना संभव हो सकता है।

(यह लेख इकॉनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली के फ़रवरी, 2015 अंक से साभार लिया गया है)

भाषान्तर – श्रीप्रकाश

नोट–

1. अन्यथा निर्दिष्ट किए जाने तक 'प्रावधान' के संदर्भ का आशय आर टी ई कानून 2009 के अनुच्छेद 12(1)(स) से रहेगा।
2. यह अध्ययन ऑक्सफ़ैम इंडिया द्वारा समर्थित था और टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ़ सोशल साइंसेस, अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी और सेंटर फॉर सोशल इक्विटी एंड इंक्लूज़न द्वारा सहयोगात्मक रूप से आयोजित किया गया था।
3. यहाँ 'पब्लिक स्कूल' का संदर्भ ब्रिटिश 'पब्लिक स्कूल' के मॉडल पर आधारित फ़ीस लेने वाले निजी स्कूलों से है, जिनमें मुख्य रूप से संभ्रांत जन समूह के बच्चे पढ़ रहे थे।
4. (2012) 6 SCC 1 देखें।
5. आर टी ई अधिनियम का अनुच्छेद 18(3) राज्यों को ऐसे स्कूलों की मान्यता समाप्त करने की अनुमति देता है, जो मान्यता संबंधी बाध्यकारी मानदंडों का पालन नहीं करते।
6. भारतीय संविधान का अनुच्छेद 30(1) यह कहता है कि सभी अल्पसंख्यक, चाहे वे धर्म– आधारित हों या भाषा-आधारित, उन्हें अपनी पसंद के अनुसार शैक्षणिक संस्थान स्थापित और व्यवस्थित करने का अधिकार है।
7. प्रमति एजुकेशन एंड कल्चरल ट्रस्ट और अन्य बनाम भारत सरकार और अन्य (रिट याचिका (c)No 416 of 2012)।
8. यह URL देखें: http://164.100.47.132/LssNew/psearch/QResult15.aspx?qref= 136729; जो 1 अक्तूबर 2013 को देखा गया।
9. इस अनुभाग के लिए कर्नाटक सरकार के सर्व शिक्षा अभियान की निम्न विश्लेषणात्मक रिपोर्ट का उपयोग किया गया; URL:http://www.schooleducation.kar.nic.in/databank/Analytical Report1213_Eng.pdf; जो 16 सितंबर 2013 को देखा गया।
10. हालाँकि, अध्ययन के तहत प्रारंभिक रूप में केवल 25 स्कूलों का आंकड़ा एकत्रित करने की योजना बनाई गई थी, लेकिन नौ अतिरिक्त स्कूल में भी ऐसा किया गया क्योंकि इन स्कूलों में समय दे दिया था।
11. हालाँकि, अध्ययन के तहत एक शैक्षणिक सत्र 2012-13 में ही प्रावधान के कार्यान्वयन को देखा गया था, फिर भी कुछ स्कूल-भ्रमण शैक्षणिक सत्र 2013-14 प्रारंभ हो जाने के बाद संचालित किए गए थे, जिसमें दो वर्षों की वित्तीय पुनर्भरण का आंकड़ा उपलब्ध हो गया।